कल और कल में फर्क
एक भौतिकीय नज़रिया

अजय शर्मा

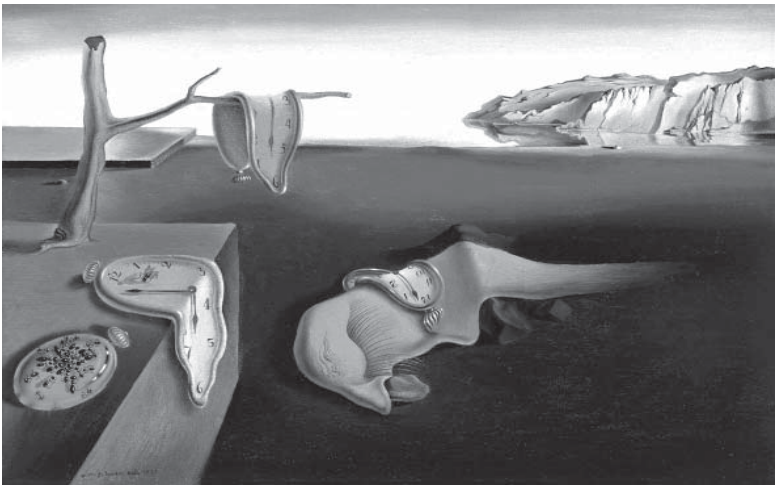

चित्र-1: साल्वाडोर डाली की एक प्रसिद्ध पेंटिंग।

वक्त रहता नहीं कहीं टिककर
आदत इसकी भी आदमी-सी है।
- गुलज़ार

जी हाँ, वक्त कहाँ टिकता है। भले ही कभी-कभार हम ऐसे मशगूल हो जाएँ कि वक्त का एहसास न रहे, वरना इसको हम हमेशा गुज़रता ही महसूस करते हैं। वो भी, सिर्फ एक ही दिशा में - अतीत से वर्तमान के ज़रिए भविष्य की ओर। आप सोचेंगे कि भला यह भी कोई कहने लायक बात हुई। समय आगे नहीं बढ़ेगा तो और कहाँ जाएगा? हम जब भी, जहाँ भी देखें, समय का गुज़रना या आगे बढ़ना ही अनुभव करते हैं। मसलन, वक्त गुज़रता है तो बीज अंकुरित होकर एक विशाल दरख्त बनता है; नवजात शिशु समय के साथ बड़ा होकर वयस्क बनता है; इत्र की एक बून्द फैलकर पूरे कमरे को महकाती है; और शीशे का गिलास हाथ से छूटकर ज़मीन पर गिरकर छोटे-छोटे टुकड़ों में बँटकर बिखर जाता है। इसका उलट होता तो कोई भी, कभी भी नहीं देखता है। और अगर कभी फिल्मों में हम ऐसा कुछ होता देखते

भी हैं, जैसे हीरो का एक छलांग में ज़मीन से बिल्डिंग की छत पर पहुँचना, तो तुरन्त हमारा शक इस तरफ जाता है कि कहीं डायरेक्टर ने फिल्म की उल्टी रील तो नहीं चला दी है। यानी हमारे सभी अनुभव तो यही बताते हैं कि समय केवल आगे ही बढ़ता है। यहाँ तक कि आपको शायद यह सवाल वाजिब ही न लगे कि आखिर ऐसा क्यों होता है।

अब भौतिकशास्त्रियों की क्या कहें, उनकी फितरत ही ऐसी है कि हर ज़ाहिर सच पर सवाल उठा देते हैं। पर मज़े की बात यह है कि ऐसे अजीब से सवालों के ज़रिए ही वे हम सबके लिए इस संसार के तमाम अनूठे राज़ परत-दर-परत बेनकाब कर पाते हैं। इस लेख में हम इसी सवाल पर गौर करेंगे कि आखिर समय का पहिया सिर्फ आगे की ओर क्यों दौड़ता है, और देखेंगे कि इस सवाल को टटोलने पर हमारे संसार के कौन-से छिपे पहलू उजागर होते हैं।

समय क्या है?

इस सवाल पर आगे बढ़ने से पहले मुनासिब होगा कि समय क्या है, इस पर एक साँझी समझ हासिल कर ली जाए। वैसे यह विषय बहुत विशाल है, और इस पर इतने मुक्तलिफ नज़रिए हैं कि इस मुद्दे पर एक क्या, अनेकों किताबें लिखी जा सकती हैं। बहरहाल, इस लेख के सीमित उद्देश्यों के मद्देनज़र हम समय को सिर्फ दो तरह से परिभाषित करेंगे। पहला, भौतिकी में ही नहीं, आम ज़िन्दगी में भी, समय एक निर्देशांक (coordinate) के रूप में काम करता है। किसी घटना के बारे में अगर आपको विस्तार से जानना है तो आप सिर्फ यह नहीं पूछते कि वह घटना कहाँ घटी, आप यह भी जानना चाहते हैं कि वह कब घटी। इस तरह हम विभिन्न घटनाओं को एक क्रम में बिठा पाते हैं, जिससे कि हम जान पाएँ कि कौन-सी घटना किस घटना के पहले हुई या बाद में।

इसी क्रम की वजह से ही हम कारण और परिणाम में न सिर्फ भेद करते हैं, बल्कि सही कारण को सही परिणाम से जोड़ने में भी मदद मिलती है। दूसरा, समय दुनिया में होने वाले बदलावों की निशानदेही भी करता है। इन बदलावों की वजह से हमें मालूम होता है कि कोई घटना कितनी देर चली। इस अन्तराल को हम घड़ियों और अन्य ऐसी प्रक्रियाओं के ज़रिए नापते हैं जो एक नियमितता से अपने आप को दोहराती हैं। ज़ाहिर है, इन बदलावों के ज़रिए ही हमें समय के गुज़रने का एहसास होता है।

अब वापस आते हैं हमारे बेतुके-से दिखने वाले सवाल पर। आप सोच रहे होंगे कि सवाल उठाना तो ठीक है, पर उसके पीछे आखिर कुछ तो कारण होना चाहिए। आपका ऐसा सोचना गलत नहीं है। भौतिकशास्त्रियों की भी इस सवाल पर गौर करने की

एक खास वजह है। वह यह कि आम जीवन में समय को सिर्फ आगे की दिशा में बढ़ते देखकर ऐसा लगता है कि शायद इसका कारण यह हो कि इस संसार के मूलभूत भौतिक नियम सिर्फ इस बात की इजाज़त देते हैं कि समय सिर्फ आगे ही बढ़े। पर जब भौतिकशास्त्री इन नियमों को टटोलते हैं तो यह पता चलता है कि इन सभी भौतिक नियमों का ज़रा-सा भी उल्लंघन नहीं होता है, अगर समय आगे की बजाय पीछे जाने लगे।

क्या समय पीछे भी जा सकता है?

यहाँ सवाल उठता है कि समय के पीछे जाने से हमारा तात्पर्य क्या है। गौर करें कि जैसा हमारी समय की दूसरी परिभाषा से इंगित होता है, समय के आगे बढ़ने का अन्दाज़ा हमें हमारी आसपास की दुनिया में होने वाले बदलावों से होता है। पन्द्रह मिनट पहले आपने गर्मा-गर्म चाय बनाई थी, और अब वह इस लेख को पढ़ने के चक्कर में ठण्डी हो गई है, कुछ देर पहले तक तो आप ठीक-ठाक थे, पर अभी किसी को देखकर आप के दिल की धड़कन बढ़ गई है, सूरज कुछ देर पहले तक तो पेड़ों में छुपा हुआ था पर अब ठीक सर के ऊपर है, इत्यादि, इत्यादि...। अगर आप आज और कल में तनिक भी फर्क न कर पाए, तो क्या आपके पास कोई आधार होगा, यह कहने का कि समय आगे बढ़ा है?

और अगर बदलाव हो रहे हैं, मगर एकदम उल्टी दिशा में, जैसे कि आपकी ठण्डी चाय का कप अपने-आप फिर से गर्म होने लगे, घड़ी की सूइयाँ पीछे घूमने लगें, और सूरज दिन का अपना सफर पूर्व से पश्चिम की जगह पश्चिम से पूर्व की ओर तय करने लगे, तो क्या आपका यह निष्कर्ष सही नहीं होगा कि समय आगे की बजाय पीछे जाने लगा है? ध्यान दें कि यह निष्कर्ष हमारे अनुभवों पर आधारित होगा, न कि समय के किसी स्वतंत्र भौतिक गुण पर। बात मूल विषय से भटक न जाए और अपवादों के बोझ तले दब न

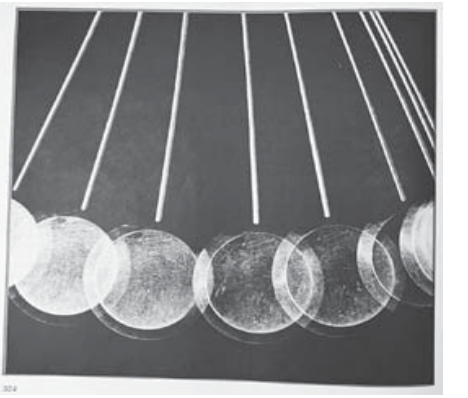

***चित्र-2**: टाइम रिवर्सल सिमिट्री - हमारे दैनिक उदाहरणों में बदलाव समय आगे बढ़ने के साथ दिखाई देते हैं। समय पीछे जाता हुआ समझ नहीं आता। गरम रखी चाय समय आगे बढ़ने के साथ ठण्डी ही होती जाएगी। घड़ी की सूइयाँ भी आगे की दिशा में बढ़ती जाती हैं। सोचिए, घड़ी की सूई अगर उलट दिशा में चलने लगे तो क्या समय आगे की बजाय पीछे जाने लगेगा?*

सके, इसलिए भौतिकशास्त्री अक्सर किसी भी मुद्दे पर अपनी चर्चा एक निकाय (system) तक सीमित रखते हैं। इस सीमित दायरे के अन्दर यह कहा जा सकता है कि यदि किसी सिस्टम में होने वाले सभी परिवर्तन हमारे अनुभव और समझ के विपरीत क्रम में घटित हों, तो कम-से-कम भौतिकी के औपचारिक ढाँचे में उस सिस्टम का विकास ऐसा प्रतीत होगा मानो वह समय-उलट (time-reversed) अवस्था में हो रहा है। यानी उस सिस्टम के विकास का वर्णन वही मूल भौतिक नियमों का उपयोग करके किया जा सकेगा, बशर्ते समय के चिन्ह को उलटकर ($t \rightarrow -t$) समीकरणों में इस्तेमाल किया जाए।

यानी इन सब नियमों में समय-उलट सममिति (time reversal symmetry) पाई जाती है। मसलन, अगर भौतिक नियमों के अन्तर्गत किसी वस्तु की कोई गति/चाल (motion) मुमकिन है, तो आदर्श परिस्थितियों में उस वस्तु की एकदम विपरीत गति भी उतनी ही नियम-संगत पाई जाती है। फर्ज़ कीजिए कि आप एक गेंद को एक ऊँचाई से गिराकर उसके ज़मीन से टकराकर वापिस उछलने की फिल्म बनाते हैं। अब अगर ज़मीन से टकराने में, या किसी भी और वजह से उस गेंद की गतिज ऊर्जा ज़रा-सा भी ज़ाया नहीं होती है, तो इस फिल्म को आप सही दिशा में चलाएँ या उल्टी चलाएँ, कोई फर्क नहीं बता पाएगा।[1] एक और उदाहरण ले लेते हैं। अगर हम सूर्य के उत्तरी ध्रुव पर खड़े होकर देखें तो पाएँगे कि इस सौरमण्डल के सभी ग्रह घड़ी की सूई से विपरीत दिशा में सूर्य की परिक्रमा करते हैं। अब अगर किसी वजह से कोई ग्रह उल्टा यानी घड़ी की सूई की दिशा में सूरज का चक्कर लगाने लगे तो क्या इससे भौतिक नियमों का उल्लंघन हो जाएगा? बिलकुल नहीं। गुरुत्वाकर्षण के नियम ऐसे हैं कि इस बात का कोई फर्क नहीं पड़ता कि कोई ग्रह सीधा चक्कर लगा रहा है या उल्टा। ऐसे सिस्टम में अगर वस्तुओं की चाल से ही हमें समय के गुज़रने का पता चलता है, और

चित्र-3: *गिरकर टूटा कप - क्या रिवर्सल सिमिट्री के दायरे में गिरकर टूट गए कप को भी शामिल कर सकते हैं।*

[1] *यकीन न आए, तो इंटरनेट पर कई सारी वेबसाइट और सॉफ्टवेयर उपलब्ध हैं जिसके ज़रिए आप ऐसी फिल्म को उल्टी दिशा में चलाकर, इस बात की परख कर सकते हैं।*

भौतिकीय नियम इस बात की परवाह नहीं कर रहे कि वस्तु की चाल/गति की दिशा आपके अनुभवों से एकमत है या विपरीत है, तो आपको कैसे पता चलेगा कि किसी भी ऐसे सिस्टम में समय आगे की ओर बढ़ रहा है या पीछे जा रहा है?

यह सिर्फ किसी एक वस्तु की गति की बात नहीं है। मसलन, अगर आपके पास एक सिस्टम है जिसमें कई सारे कण स्वतंत्रता से अपनी-अपनी गति से विचर रहे हैं, और आप अगर किसी तरह से उन सब की गति को उल्टा कर देते हैं, तो आपका सिस्टम बिना किसी नियम का उल्लंघन किए, बहुत ही स्वाभाविक तरह से पहले की अवस्था में जाने लगेगा – मानो समय उल्टी दिशा में बहने लगा हो। समय-उलट सममिति सिर्फ वस्तुओं की चाल या गुरुत्वाकर्षण के नियमों तक ही सीमित नहीं है। अधिकांश मूलभूत भौतिक नियमों में समय उलट सममिति पाई जाती है। यहाँ तक कि क्वांटम भौतिकी भी समय-उलटता के प्रति सममित है।

अब, जैसा कि आप शायद सोच रहे होंगे, यह सममिति एक बेहद रोचक पहेली को जन्म देती है। यही गुत्थी हमारे मूल प्रश्न का सबब है कि समय सिर्फ आगे ही क्यों जाता है। पहेली यह है कि अगर मूलभूत भौतिक नियमों को ज़रा-सा भी फर्क नहीं पड़ता कि समय आगे जाए या पीछे, तो न सिर्फ हमारे व्यक्तिगत जीवन और समाज में बल्कि समूचे ब्रह्माण्ड में भी समय सिर्फ एक ही दिशा में, यानी आगे की ओर, ही बढ़ता क्यों दिखता है? अगर इन नियमों के हिसाब से बीते हुए कल और आने वाल कल में कोई फर्क नहीं है, तो क्या हमारे सभी अनुभव भ्रामक हैं?

ऊष्मा गतिकी के नियम

इस पहेली का जन्म उन्नीसवीं सदी में थर्मोडायनामिक्स (ऊष्मागतिकी) के सन्दर्भ में हुआ था। याद करें, यह ऊष्मा से चलने वाले भाप-इंजनों का दौर था। इसलिए इस युग के वैज्ञानिकों में ऊष्मा और उसके गुणों को समझने में काफी रुचि थी। इनमें एक प्रमुख नाम है फ्रांस के 'सादी कार्नोट' का।[2] भाप इंजनों पर शोध करने पर उन्हें समझ आया कि भाप इंजन तभी काम करते हैं जब ऊष्मा एक गर्म जगह/पिण्ड से ठण्डी जगह/पिण्ड की तरफ जाती है। 1824 में उन्होंने अपनी यह खोज एक पर्चा लिखकर अपने साथियों के साथ साझा की। यह पर्चा कई वैज्ञानिकों ने पढ़ा, पर इसका मूल मर्म केवल जर्मन वैज्ञानिक, रुडोल्फ क्लॉसियस, ही समझ पाए। वे भाँप गए कि कार्नोट

[2] *इनके पिता, लज़ारे कार्नोट, फारसी कवि सादी शिराज़ी के बड़े फैन थे। कहा जाता है कि यही वजह है कि उन्होंने अपने बेटे का नाम अपने पसन्दीदा शायर के नाम पर रखा।*

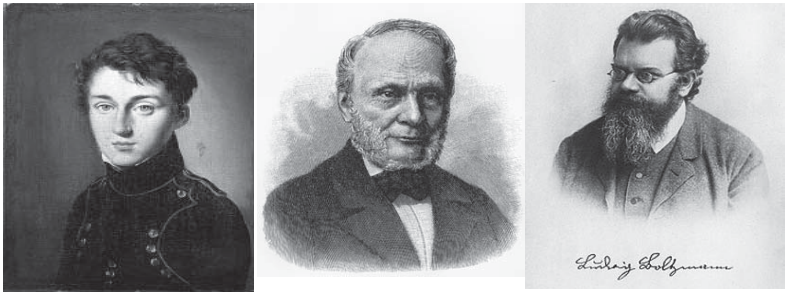

चित्र-4: *सादी कार्नोट-रुडोल्फ क्लाउसियस-बोल्ट्ज़मान: उन्नीसवीं सदी में ऊष्मा के विविध गुणधर्मों को समझते हुए ऊष्मागतिकी के नियमों को प्रतिपादित करने में महती भूमिका निभाई।*

की खोज प्रकृति के नियम की ओर इशारा करती है जिसे हम आज ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम के रूप में जानते हैं। इस नियम के अनुसार, किसी भी सिस्टम में ऊष्मा अपने आप कभी भी ठण्डे स्थान/पिण्ड से गर्म स्थान की ओर नहीं जा सकती है, जब तक कि बाहरी कार्य न किया जाए। यानी उसका स्वतः स्थानान्तरण केवल गर्म स्थान/पिण्ड से ठण्डे स्थान/पिण्ड की ओर ही हो सकता है।

यह पहली खोज थी जहाँ वैज्ञानिकों ने देखा कि प्रकृति के मूलभूत भौतिकीय नियमों में एक नियम तो ऐसा है जो समय-उलटता के प्रति सममित नहीं है। चूँकि बदलाव के ज़रिए ही हमें समय के बहने का पता चलता है, यही वो नियम है जिसमें अतीत और भविष्य में साफ फर्क नज़र आता है। क्योंकि सिस्टम चाहे जो भी हो, ऊष्मागतिकीय बदलाव (गर्म से ठण्डे की ओर) की दिशा सिर्फ एक ही होती है। भौतिकशास्त्री जब प्रकृति का कोई नया गुण खोजते हैं, तो उसका वर्णन और मापन करने के लिए अक्सर एक नई गणितीय मात्रा की भी प्रस्तावना करते हैं। क्लॉसियस ने ऊष्मागतिकीय बदलाव के मापन के लिए एक नई आदिश (scalar) मात्रा का सुझाव रखा जिसे उन्होंने एंट्रॉपी (entropy; चिह्न:S) नाम दिया। साथ ही, उन्होंने ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम का एक वैकल्पिक रूप प्रस्तुत किया जिसके अनुसार, किसी भी प्रक्रिया के दौरान एक पृथक (isolated) सिस्टम की एंट्रॉपी या तो बढ़ती है या स्थिर रहती है; वह कभी कम नहीं हो सकती। गणितीय भाषा में: $\Delta S_{total} \geq 0$.

ऊष्मागतिकी में छुपी पहेली

क्लॉसियस ने ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम को प्रतिपादित तो किया पर उसके पीछे छिपी पहेली को पहचान नहीं पाए। इस पहेली को सबसे पहले पहचाना जर्मनी के ही

जोसफ लोश्मिमड्ट ने। हुआ कुछ ऐसा कि 1870 के दशक में जर्मन वैज्ञानिक लुडविग बोल्ट्ज़मान सांख्यिकीय तर्कों द्वारा यह दिखाने में कामयाब हो गए कि एक ऐसे पृथक सिस्टम में जिसमें कई सारे आज़ाद अणु एक-दूसरे से टकराते हुए स्वतंत्र विचरण कर रहे हों, ऊष्मागतिकीय बदलाव ऐसी ही दिशा में होते हैं जिसमें एंट्रॉपी या तो स्थिर रहती है या बढ़ती है। इस कथन को बोल्ट्ज़मान की एच-थ्योरम (H-theorem) भी कहा जाता है।

बोल्ट्ज़मान के इस दावे को उनके मित्र लोश्मिमड्ट ने 1876 में एक पर्चा लिखकर चुनौती दी और कहा कि बोल्ट्ज़मान का तर्क गलत है क्योंकि यह एक प्रतिवर्तनीयता विरोधाभास (reversibility paradox) को जन्म देता है। इस विरोधाभास के अनुसार, अगर ऐसे सिस्टम में अणुओं का विचरना और आपस में टकराना भौतिकी के समय-उलट सममित नियमों के आधार पर हो रहा है तो उनके ऐसे व्यवहार से एक अपरिवर्तनीय प्रक्रिया (एंट्रॉपी का हमेशा स्थिर रहना या बढ़ना) का जन्म तो नहीं होना चाहिए। पर हम देखते तो यही हैं कि पृथक सिस्टम की एंट्रॉपी किसी भी प्रक्रिया के दौरान कभी भी कम नहीं होती है।

लोश्मिमड्ट की चुनौती में दम था। लिहाज़ा, बोल्ट्ज़मान ने लोश्मिमड्ट द्वारा उठाए गए विरोधाभास को गम्भीरता से लेते हुए अपनी सोच को बदला और ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम को एक गतिक नियम (dynamical law) की तरह नहीं बल्कि एक सांख्यिकीय नियम (statistical law) की तरह से समझने की दरकार पेश की। यानी उन्होंने कहा कि पृथक सिस्टम में एंट्रॉपी का बढ़ना या स्थिर रहना हमें इसलिए नहीं दिखता कि वह मूलभूत नियमों की एक ज़रूरत है, बल्कि ऐसा होते हुए इसलिए दिखता है क्योंकि एंट्रॉपी के स्वतः कम होने की सम्भावना बहुत-ही कम होती है।

सूक्ष्म एवं स्थूल स्थिति

गौरतलब बात यह है कि बोल्ट्ज़मान ने ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम को संख्यिकीय जामा पहनाने के लिए एंट्रॉपी को एक नए तरीके से परिभाषित किया। यह परिभाषा हम आज तक इस्तेमाल करते हैं। इस परिभाषा को वर्णित करने से पहले कुछ बातें बताना ज़रूरी हैं। अक्सर एक सिस्टम ऐसी कई सारी विभिन्न और बारीकी-से वर्णित सूक्ष्म परिस्थितियों (microstates) में पाया जा सकता है, जिन्हें हम मोटे तौर पर समतुल्य मानते हुए एक ही स्थूल स्थिति (macrostate) को दर्शाते हुए मान सकते हैं।

मिसाल के तौर पर, फर्ज़ कीजिए कि आपके पास कुल सौ रुपए हैं जो आपकी एक जेब में रखे हुए हैं और

आपके कपड़ों में कुल मिलाकर तीन ही जेब हैं। यह हो गई आपकी स्थूल स्थिति। अब आपके पास यह राशि कई तरह से हो सकती है। मसलन, यह राशि आपकी पेंट की आगे की बाईं जेब, दाईं जेब, या शर्ट की जेब में हो सकती है। इस उदाहरण में सौ के नोट का किसी खास जेब में होना आपकी एक खास सूक्ष्म परिस्थिति को दर्शाता है। अगर आपके कपड़ों में कुल मिलाकर बस तीन ही जेब हैं, तो आप तीन सूक्ष्म परिस्थितियों में पाए जा सकते हैं, जो एक स्थूल स्थिति, यानी आपके पास एक सौ रुपए का नोट, के समतुल्य है।

इसी तरह, किसी भी सिस्टम का संख्यिकीय तौर पर वर्णन करने के लिए आप कोई ऐसी स्थूल स्थिति को चुन सकते हैं जो असल में उसकी तमाम मुक्तलिफ सूक्ष्म परिस्थितियों का मोटे तौर पर सही वर्णन करता है। मसलन, अगर एक गैस का गुब्बारा आपका सिस्टम है तो 'तापमान = 300K, दबाव = 1 atm, आयतन = 1 लीटर, N = 10^{23} अणु' इसकी एक स्थूल स्थिति मानी जा सकती है। अब यह स्थूल स्थिति उन सब सूक्ष्म परिस्थितियों के समतुल्य होगी जिसमें 10^{23} अणु अलग-अलग जगह और अलग-अलग गतियों से गुब्बारे के अन्दर भ्रमण कर रहे हैं, पर फिर भी कुल मिलाकर गुब्बारे का तापमान 300K, दबाव = 1 atm और आयतन 1 लीटर ही निकलता है। गौर करें कि किसी सूक्ष्म परिस्थिति को सिर्फ कणों की जगह नहीं बल्कि उनकी चाल और दिशा (वेग) भी परिभाषित करती है। इसलिए दो सूक्ष्म परिस्थितियाँ तब भी अलग मानी जाती हैं जब उनमें कणों की जगह एक-जैसी हो पर वेग अलग हो।

एंट्रॉपी यानी कितनी अव्यवस्था

अब आते हैं एंट्रॉपी की परिभाषा पर। यह एक आदिश संख्या है जो एक सिस्टम के बारे में बताती है कि उसकी एक स्थूल स्थिति कितनी सारी सूक्ष्म परिस्थितियों के समतुल्य है। मोटे तौर पर इस जानकारी से हमें पता चलता है कि इस सिस्टम में कितनी अव्यवस्था है।

आइए, देखते हैं कैसे। फर्ज़ कीजिए कि आपके पास दस पुस्तकों की एक छोटी-सी अलमारी है जिसमें पाँच हिन्दी और पाँच इंग्लिश की किताबें हैं। आपने ये किताबें एक व्यवस्था के हिसाब से जमाकर रखी हैं, यानी हरेक किताब की आपकी व्यवस्था अनुसार, एक खास जगह है। ऐसे में इस अलमारी की स्थूल स्थिति सिर्फ एक सूक्ष्म परिस्थिति के समतुल्य है, क्योंकि आपके इन्तज़ाम के हिसाब से कोई भी किताब इधर-से-उधर नहीं हो सकती है। ज़ाहिर है, ऐसे हालात में आपकी अलमारी की एंट्रॉपी न्यूनतम ही होगी। अब आपका कोई मित्र आता है और इंग्लिश किताबों को नीचे वाले व हिन्दी किताबें ऊपर

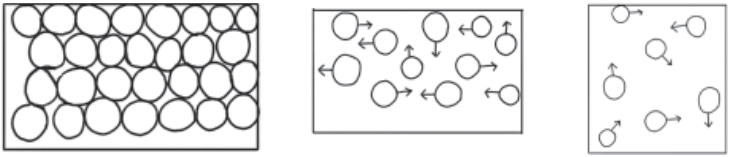

चित्र-5: बर्फ, बर्फ पिघलना, भाप बनना – इन तीनों अवस्थाओं में बर्फ में पानी के अणुओं की जमावट ज़्यादा व्यवस्थित होती है इसलिए एंट्रॉपी कम होती है। बर्फ पिघलकर पानी बनने की अवस्था में अभी भी अणुओं की जमावट में कुछ व्यवस्था है फिर भी अणुओं को हलचल के लिए ज़्यादा जगह मिलती है, परिणामस्वरूप एंट्रॉपी बढ़ जाती है। भाप बनने की अवस्था में पहले वाली अणुओं की जमावट कम दिखाई देती है। अणु पहले के मुकाबले ज़्यादा स्वच्छन्दता से यहाँ-वहाँ जा रहे हैं। यहाँ एंट्रॉपी पहले से ज़्यादा बढ़ गई है। यह चित्र केवल सांकेतिक है।

वाले शेल्फ में बेतरतीब तरीके से बाँट देता है। यकीनन आपके मित्र ने आपकी अलमारी में छेड़-छाड़ कर उसे थोड़ा अव्यवस्थित कर दिया है। इस बढ़ी हुई अव्यवस्था को अब एंट्रॉपी की भाषा में समझते हैं।

यदि यह मान लिया जाए कि कोई भी दो किताबें एक-जैसी नहीं हैं, तो दोनों शेल्फ की किताबें 5x4x3x2x1 = 120 तरीकों से जमाई जा सकती हैं। यानी दोनों शेल्फ को मिलाकर इस अलमारी की 120x120 = 14,400 सूक्ष्म परिस्थितियाँ एक स्थूल परिस्थिति, जिसमें अँग्रेज़ी और हिन्दी की पुस्तकें दो शेल्फ में बँटी हुई हैं, के समतुल्य देखी जा सकती हैं। इन गणनाओं के आधार पर आप अपने मित्र को वैज्ञानिक भाषा में यह कहकर अपनी नाराज़गी ज़ाहिर कर सकते हैं कि उसने खामख्वाह आपकी सजी-सजाई अलमारी की एंट्रॉपी में बहुत इज़ाफा कर दिया है।

बर्फ पिघलना और इत्र महकना

यह तो एक कृत्रिम उदाहरण था, पर आप अगर गौर करें तो अपने इर्द-गिर्द ऐसे तमाम सिस्टम देख सकते हैं, जिनमें वक्त के साथ अपने आप ही स्वाभाविक रूप से अव्यवस्था और एंट्रॉपी बढ़ती हुई देखी जा सकती है। बर्फ का टुकड़ा खुले में रखने पर कुछ देर में अपने आप पिघलकर पानी बन जाता है। पहले, बर्फ में पानी के अणु बड़े ही व्यवस्थित तरीके से जमे हुए थे। इस वजह से इसकी स्थूल स्थिति थोड़ी ही सूक्ष्म परिस्थितियों के समतुल्य थी। ज़ाहिर है कि ऐसे में बर्फ के टुकड़े की एंट्रॉपी भी कम ही होगी। पिघलने की वजह से पानी के यही अणु अपनी जगह से हटने के लिए स्वतंत्र हो जाते हैं। ऐसे में बहुत सारी सूक्ष्म परिस्थितियाँ ऐसी होंगी जिनमें कोई खास फर्क नहीं किया जा सकता। यानी पिघलने के बाद पानी की स्थूल स्थिति बहुत सारी सूक्ष्म परिस्थितियों

के समतुल्य हो जाती है। लिहाज़ा, पिघलने पर बर्फ के पानी की अव्यवस्था और एंट्रॉपी, दोनों बढ़ जाती हैं।

ऐसे ही तर्क की मदद से आप देख सकते हैं कि इत्र की बोतल खुलने पर जब पूरा कमरा महक उठता है, तो वैज्ञानिक नज़रिए से इस प्रक्रिया में पूरे कमरे की अव्यवस्था यानी एंट्रॉपी में इज़ाफा होता है। प्रकृति में ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम का कोई अपवाद नहीं है। यानी सभी पृथक सिस्टम में वक्त के साथ अव्यवस्था और एंट्रॉपी कभी भी कम होती हुई नहीं देखी जाती है। आप आज अपना घर साफ-सुथरा करके व्यवस्थित करें, पर कुछ दिनों में वह अव्यवस्थित हो ही जाता है। आज जो चीज़ नई है, वो कुछ समय बाद टूट-फूटकर पुरानी हो ही जाती है।

सिस्टम पृथक न हो तो?

अब आप सोच रहे होंगे कि हमेशा तो ऐसा नहीं होता है। आखिर जब एक छोटा-सा बीज अंकुरित होकर एक विशाल दरख्त बन जाता है, नवजात शिशु बड़ा होकर छह-फुटा जवान बन जाता है, या फिर गर्म चाय रखी-रखी ठण्डी हो जाती है, तो क्या इन सबमें भी समय के साथ अव्यवस्था और एंट्रॉपी बढ़ रही होती है? आपका शक सही है। इन सभी प्रक्रियाओं में समय के साथ अव्यवस्था बढ़ती नहीं है बल्कि कम ही होती दिखती है। पर ध्यान दें, ऊष्मागतिकी का दूसरा नियम पृथक सिस्टम पर ही लागू होता है, उन सिस्टम पर नहीं जो अपने आसपास से ऊर्जा और पदार्थों का आदान-प्रदान कर रहे होते हैं। इन सभी उदाहरणों में कोई भी सिस्टम अपने वातावरण से पृथक नहीं है। बीज और नवजात शिशु जैसे जैविक सिस्टम की खासियत होती है कि वे एक हद तक अपनी खुद की अव्यवस्था और एंट्रॉपी को बढ़ने से रोक सकते हैं। पर इसकी कीमत वातावरण को चुकानी पड़ती है। यानी, बीज के पेड़ बनने या शिशु के वयस्क होने पर भले ही उनकी एंट्रॉपी कम हो जाए, पर इस प्रक्रिया में वातावरण की एंट्रॉपी और अव्यवस्था कहीं ज़्यादा मात्रा में बढ़ जाती है। यानी, पेड़ और वातावरण (या शिशु और वातावरण) को मिलाकर देखें तो वक्त के साथ कुल अव्यवस्था और एंट्रॉपी बढ़ती ही है, कभी कम नहीं होती है।

चाय के कप के साथ भी कुछ ऐसा ही होता है। जब चाय ठण्डी हो रही होती है तो ऊष्मा के ज़रिए वह अपनी काफी ऊर्जा अपने वातावरण में बाँट देती है। केवल चाय की बात करें, तो भले ही उसके ठण्डा होने पर उसकी एंट्रॉपी (या अव्यवस्था) में कमी आती है किन्तु इस प्रक्रिया में ऊर्जा को ग्रहण करने के कारण वातावरण की एंट्रॉपी (या अव्यवस्था) उससे कहीं अधिक बढ़ जाती है।

पृथक सिस्टम में बदलाव की दिशा

हम अगर बदलाव को एंट्रॉपी के नज़रिए से समझें तो हमारा अनुभव हमें यही बताता है कि दुनिया में पृथक सिस्टम में होने वाले बदलाव एक ही दिशा में होते हैं। इन बदलावों में एंट्रॉपी या तो स्थिर रहती है या बढ़ती है।[3] अब जैसा कि हम पहले ज़िक्र कर चुके हैं, चूँकि समय के आगे बढ़ने का एहसास हमें बदलावों के ज़रिए ही होता है, ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम की बदौलत ही हमें समय हमेशा आगे की ओर बढ़ता हुआ दिखता है। यहाँ पर एक स्पष्टीकरण ज़रूरी है। वह यह कि जैसा कि बोल्ट्ज़मान ने लोश्मिमड्ट के साथ हुई बहस में ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम के बारे में खुलासा किया था – यह नियम एक गतिक नियम नहीं, बल्कि एक सांख्यिकीय नियम है।

लिहाज़ा, इस नियम में यह नहीं कहा जा रहा कि किसी पृथक सिस्टम में कभी भी अव्यवस्था और एंट्रॉपी समय के साथ खुदबखुद घट नहीं सकती है। ऐसा बिलकुल हो सकता है, और अगर ऐसा हो तो इसमें भौतिकी के मूलभूत नियमों का ज़रा-सा भी उल्लंघन नहीं होगा। पर हमें ऐसा होता हुआ नहीं दिखता है। यह इसलिए कि केवल सांख्यिकीय कारणों के चलते अव्यवस्था और एंट्रॉपी की समय के साथ खुदबखुद घटने की सम्भावना बहुत-बहुत ही कम होती है। यह लगभग वैसा ही है जैसे वन-डे वर्ल्ड कप क्रिकेट फाइनल में दसवीं पायदान पर आने वाला बल्लेबाज़ आखिरी ओवर की छहों बॉलों पर छक्के लगा सकता है, पर हम ऐसा होते हुए नहीं देखते हैं, क्योंकि ऐसा होने की सम्भावना बहुत ही कम होती है। यह सम्भावना कितनी कम होती है, इसका अन्दाज़ा इत्र की खुली बॉटल के उदाहरण से मिल सकता है। जैसा कि आप जानते हैं, इत्र की शीशी खोलने पर इत्र की एक बूँद के कण पूरे कमरे में फैलकर कमरे को सुगन्धित कर देते हैं। अब इत्र के कण तो कमरे के वातावरण में विचरने के लिए आज़ाद हैं, तो जिस स्वतंत्रता से वे विचरकर पूरे कमरे में फैल जाते हैं, उसी स्वतंत्रता की बदौलत कुछ समय बाद वे खुदबखुद वापस बॉटल में समा भी सकते हैं। पर ऐसा होते हुए हम नहीं देखते हैं क्योंकि सांख्यिकीय गणनाओं के आधार पर ऐसा होने की सम्भावना लगभग $10^{-(10^{20})}$ $(=10^{-100,000,000,000,000,000,000})$ है। यह सम्भावना इतनी कम है कि यदि आप इसके घटित होने की प्रतीक्षा इस ब्रह्माण्ड की आयु से भी अधिक समय तक करें, तब भी सम्भवतः आपको ऐसा होते देखने का अवसर नहीं मिलेगा।

---

[3] *अक्सर, ज़्यादातर हालातों में एंट्रॉपी बढ़ती ही है, स्थिर रहने की नौबत बहुत ही कम आती है।*

चित्र-6: *जब इत्र किसी बोतल में बन्द होता है तो उसके अणुओं को हलचल के मौके कम होते हैं। स्प्रे करने पर इत्र के अणु कमरे में फैल जाते हैं इसलिए वे पहले के मुकाबले ज़्यादा हलचल कर पाते हैं। यहाँ एंट्रॉपी पहले के मुकाबले कहीं ज़्यादा बढ़ गई है।*

दो-तरफा समय

इस सम्भावना के इतना कम होने का एक प्रमुख कारण इस उदाहरण में इत्र के कणों की अत्यधिक संख्या है।[4] केवल सांख्यिकीय तर्कों के आधार पर देखा जा सकता है कि एक सिस्टम में जितने ज़्यादा कण/हिस्से/इकाइयाँ होंगे, यह सम्भावना उतनी ही कम होती जाती है कि समय के साथ इस सिस्टम की एंट्रॉपी खुदबखुद कम हो जाए। यानी ऊष्मागतिकी का दूसरा नियम बड़े, स्थूलस्तरीय (macroscopic) सिस्टम में – जिनमें बहुत बड़ी संख्या में कण, हिस्से या पुर्ज़े होते हैं, और जो हमें अपने दैनिक जीवन में देखने को मिलते हैं – अत्यन्त दृढ़ता से लागू होता है। किन्तु यदि आपके सिस्टम में 100 से कम कण हों, तो इस नियम के विपरीत सिस्टम की एंट्रॉपी (या अव्यवस्था) अपने आप कम होते देखने के लिए आपको अधिक समय तक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी।

दस और उससे कम कणों के सिस्टम में तो एंट्रॉपी अपने आप घटती-बढ़ती रहती है। और अगर आपके सिस्टम में एक ही कण है, तो ऐसे सिस्टम में ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम का कोई मतलब ही नहीं है। यानी इसका अर्थ यह भी हुआ कि अगर आपके ब्रह्माण्ड में कुल जमा दस या उससे कम कण हैं, तो ऐसे ब्रह्माण्ड में एंट्रॉपी के घटते-बढ़ते रहने के कारण समय की कोई खास दिशा नहीं होगी। वह कभी आगे तो कभी पीछे जाता दिखेगा। ज़ाहिर है, ऐसे ब्रह्माण्ड में हमारा होना नामुमकिन है। हमारा असंख्य कणों वाला ब्रह्माण्ड ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम के लिए पूरा मुफीद है। ऐसे ब्रह्माण्ड में एंट्रॉपी हमेशा बढ़ती और काल-चक्र सिर्फ आगे की ओर ही घूमता दिखेगा।

ब्रह्माण्ड की न्यूनतम एंट्रॉपी

बीते हुए कल और आने वाले कल में यही सबसे बड़ा अन्तर है – समय

[4] *इत्र की एक बूँद में लगभग 10^{20} अणु होते होंगे।*

के साथ एंट्रॉपी का बढ़ना। यही काल-चक्र के आगे घूमने की एकमात्र निशानी है। अब यहाँ एक सवाल लाज़मी है: अगर एंट्रॉपी लगातार बढ़ती ही जाती है, तो सबसे कम कब रही होगी? भौतिकशास्त्रियों का मानना है कि इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के समय उसकी व्यवस्थता (order) अधिकतम और एंट्रॉपी न्यूनतम थी। तब से समय के साथ ब्रह्माण्ड की कुल एंट्रॉपी बढ़ती जा रही है।

यकीनन, एक वक्त ऐसा भी आएगा जब ब्रह्माण्ड में अव्यवस्थता अधिकतम हो जाएगी और एंट्रॉपी का और बढ़ना थम जाएगा। ऐसे ब्रह्माण्ड में कुछ नया, कुछ बदलाव नहीं हो रहा होगा। तब वक्त थम जाएगा और ब्रह्माण्ड का एक तरह से अन्त हो जाएगा। घबराएँ नहीं, ऐसा हाल-फिलहाल में नहीं होने वाला। भौतिकशास्त्रियों का ऐसा अनुमान है कि इस कयामत को आते-आते करीब 10^{100} साल तो लग ही जाएँगे।

भौतिकी का आधार स्तम्भ नियम

सांख्यिकीय बुनियाद पर टिके होने की वजह से भले ही ऊष्मागतिकी के दूसरे नियम को भौतिकी के मूलभूत नियमों की श्रेणी में न रखा जाता हो, पर महत्ता में यह किसी नियम से कम नहीं है। न सिर्फ यही नियम है जो समय की दिशा तय करता है, बल्कि आइंस्टाइन का तो मानना था कि आने वाले समय में अगर बाकी सब नियम आधे-अधूरे या गलत साबित हो भी जाएँ, तब भी ऊष्मागतिकी का दूसरा नियम हमेशा भौतिकी का आधार-स्तम्भ बना रहेगा। यह इसलिए कि अन्य भौतिक नियमों से मुक्तलिफ, यह नियम हमारी दुनिया के भौतिक तथ्यों पर कम और खालिस गणित और तर्क पर ज़्यादा टिका हुआ है। साथ ही, यह नियम हमारी दुनिया के एक बहुत ही दिलचस्प और महत्वपूर्ण पहलू को उजागर करता है। भौतिकशास्त्री रिचर्ड फाइनमेन (Richard Feynman) का मानना था कि वक्त का आगे बढ़ना हमें बताता है कि केवल भौतिकी के मूलभूत नियमों के ज़रिए आप दुनिया के कई महत्वपूर्ण पहलुओं को नहीं समझ सकते हैं। हमारी दुनिया के अनुभव प्रायः इन नियमों से कहीं दूर, एक अलग ही स्तर पर होते हैं।

फाइनमेन का इशारा था कि संसार का अस्तित्व कई स्तरों पर समझा जा सकता है। हर स्तर पर ऐसे नए गुण उभरते हैं जिन्हें समझने के लिए अलग अवधारणाओं और नियमों की ज़रूरत पड़ती है। फाइनमेन के अनुसार, इन विभिन्न स्तरों को बढ़ती जटिलता के क्रम में जमाकर देखा जा सकता है। सबसे सरलतम स्तर पर संसार को समझने के लिए भौतिकी के मूलभूत नियम पर्याप्त साबित होते हैं। लेकिन जैसे-जैसे हम जटिलता के स्तर पर ऊपर

जाते जाएँगे, उजागर हुए नए पहलुओं को समझने के लिए हमें नए नियम और अवधारणाओं की ज़रूरत पड़ती है। मसलन, अगर आपके सिस्टम में दो-चार कण ही हैं, तो इस सिस्टम में होने वाली घटनाओं को समझने के लिए भौतिकी के मूलभूत नियम काफी होते हैं। लेकिन जैसे ही सिस्टम में 100 से अधिक कण हो जाते हैं, तो ऐसे सिस्टम को समझने के लिए हमें समय के साथ-साथ तापमान और दबाव जैसी कई और अवधारणाओं व ऊष्मागतिकी के नियमों जैसे कई और नियमों की आवश्यकता महसूस होने लगती है। फाइनमेन का मानना था कि इस तरह आगे बढ़ते हुए जब हम आखिरी स्तर पर पहुँचते हैं तो पाप-पुण्य, सौन्दर्य, और आशा जैसे दुनिया के जटिलतम पहलुओं से मुखातिब होते हैं, जिन्हें समझने के लिए हमें सम्भवतः दर्शनशास्त्र का सहारा लेना पड़ेगा। उनके अनुसार, संसार की समग्र और गहरी समझ के लिए ज़रूरी है कि हम दुनिया के विभिन्न स्तरों को पहचानें और उनके बीच के जुड़ावों को समझने का प्रयास करें।

अजय शर्मा: एथेंस, संयुक्त राज्य अमेरिका में यूनिवर्सिटी ऑफ जॉर्जिया के शैक्षणिक सिद्धान्त और अभ्यास विभाग (डिपार्टमेंट ऑफ एजुकेशनल थ्योरी एंड प्रैक्टिस) में प्रोफेसर के तौर पर कार्यरत हैं। उनका मौजूदा शोध शिक्षा पर नवउदारवाद के प्रभाव के सैद्धान्तिक तथा नृवंशविज्ञान सम्बन्धी अन्वेषण पर केन्द्रित है। 1990 के दशक में, एक फुल-टाइम अकादमिक बनने से पहले, वे होशंगाबाद, मध्य प्रदेश में होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के साथ काम करते थे।